



2026:AHC:7821-DB

ए.एफ.आर.

सुरक्षित तिथि : 30.10.2025

प्रदत्त तिथि : 13.01.2026

आपराधिक विविध रिट याचिका संख्या 18905 / 2025

संजय वाही

...याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य

... प्रतिवादीगण

अपीलकर्ता(ओं) के अधिवक्ता: श्री देवांग साल्वा;वरिष्ठ अधिवक्ता

प्रतिवादी(यों) के अधिवक्ता: श्री मोहित सिंह; श्री राजन मिश्रा और शासकीय अधिवक्ता.

कोर्ट नंबर- 48

माननीय न्यायमूर्ति चन्द्र धारी सिंह

माननीय न्यायमूर्ति लक्ष्मी कांत शुक्ला

(माननीय न्यायमूर्ति चंद्र धारी सिंह द्वारा सुनाया गया)

1. याचिकाकर्ता द्वारा यह रिट याचिका निम्नलिखित राहतों की मांग करते हुए दायर की गई है:

“(i) दिनांक 03.08.2024 को दर्ज की गई एफ.आई.आर. मुकदमा अपराध संख्या 311/2024, धारा 420, 406, 467, 468, 471, 120-बी, 504, 507 भारतीय दंड संहिता) को रद्द करने के लिए उपयुक्त रिट, आदेश या निर्देश जारी किया जाए।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(iii) प्रतिवादियों को दिनांक 03.08.2024 को दर्ज की गई एफ.आई.आर. (मुकदमा अपराध संख्या 311/2024, धारा 420, 406, 467, 468, 471, 120-बी, 504, 507 भारतीय दंड संहिता, पुलिस स्टेशन बीटा 2, जिला ग्रेटर नोएडा (कमिशनरेट गौतम बुद्ध नगर), उत्तर प्रदेश के तहत याचिकाकर्ता के विरुद्ध कोई भी दंडात्मक कार्रवाई न करने का आदेश दिया जाए।

(iii) दिनांक 17.07.2025 की आक्षेपित आरोपपत्र और दिनांक 26.08.2025 के आक्षेपित संज्ञान/समन आदेश को रद्द करने के लिए उत्प्रेषण की तरह का उपयुक्त रिट, आदेश या निर्देश जारी किया जाए। यह आदेश ए.सी.जे.एम.-प्रथम, जी.बी. नगर की अदालत द्वारा आपराधिक मामला संख्या 8223/2025 (राज्य बनाम संजय वाही) में पारित किया गया था। साथ ही, केस संख्या 311/2024, धारा 420, 406, 467, 468, 471, 120-बी, 504, 507 आई.पी.सी., पुलिस स्टेशन बीटा 2, ग्रेटर नोएडा (आक्षेपित गौतम बुद्ध नगर) उत्तर प्रदेश से संबंधित संपूर्ण कार्यवाही और वर्तमान रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान हुई सभी अनुवर्ती कार्यवाही को भी रद्द किया जाए। अन्यथा, याचिकाकर्ता को अपूरणीय हानि और क्षति का सामना करना पड़ेगा।“

संक्षिप्त तथ्य

2. अभियोजन पक्ष के मामले के अनुसार, याचिकाकर्ता और शिकायतकर्ता-प्रतिवादी संख्या 2 एक साथ व्यापार कर रहे थे। 2018-19 के दौरान, याचिकाकर्ता ने विकास के लिए एक जमीन खरीदने का फैसला किया और उस जमीन का विकास हो जाने के बाद, वह उसे बेचना चाहता था। प्रतिवादी संख्या 2 की पत्नी, दीपिका गुप्ता, उस जमीन में निवेश करने में रुचि रखती थीं। इस उद्देश्य से, प्रतिवादी संख्या 2 की पत्नी ने याचिकाकर्ता के साथ साझेदारी समझौता किया। वर्ष 2019 में, उक्त जमीन की खरीद के लिए याचिकाकर्ता और आरोपी संख्या 3, 4 और 5 के बीच एक विक्रय समझौता किया गया। इसके बाद, पत्नी ने इस साझेदारी समझौते को शिकायतकर्ता-प्रतिवादी संख्या 2 तक भी बढ़ा दिया। वर्ष 2020 में, याचिकाकर्ता ने एक व्यक्ति, सुनील कोहली (आरोपी संख्या 3) के साथ भी एक साझेदारी समझौता किया। 16.03.2024 को शिकायतकर्ता ने याचिकाकर्ता को फोन किया और उसे शाम 6:30 बजे डी-18, सेक्टर 47 नोएडा स्थित उसके घर पर मिलने के लिए कहा। याचिकाकर्ता शाम करीब 7:15 बजे शिकायतकर्ता के घर गया। शिकायतकर्ता, उसकी पत्नी दीपिका गुप्ता और अन्य परिवार के सदस्यों ने याचिकाकर्ता के साथ दुर्यवहार करना शुरू कर दिया। शिकायतकर्ता और उसके परिवार के सदस्यों ने याचिकाकर्ता को धमकाया, उसके साथ मारपीट की और उसे कई घंटों तक जबरन घर में बंद



रखा। उन्होंने याचिकाकर्ता की पत्नी और बेटों को भी फोन करके गंभीर परिणाम भुगतने की धमकी दी।

3. आरोप है कि शिकायतकर्ता और उसकी पत्नी दीपिका गुप्ता ने याचिकाकर्ता से जबरन दो चेक पर हस्ताक्षर करवाए, अर्थात् चेक संख्या '000349' जिसकी राशि 3,50,00,000 रुपये है और चेक संख्या '000352' जिसकी राशि 14,00,00,000 रुपये है।

4. इस घटना के अगले दिन, याचिकाकर्ता ने शिकायतकर्ता-प्रतिवादी संख्या 2 और उसकी पत्नी के खिलाफ मारपीट, गलत तरीके से रोकना, जबरन हस्ताक्षर करवाना और 17,50,00,000/- रुपये के चेक अपने पास रखने की घटना के संबंध में पुलिस में शिकायत दर्ज कराई। 20.06.2024 को, शिकायतकर्ता-प्रतिवादी संख्या 2 ने याचिकाकर्ता और अन्य के खिलाफ धारा 156(3) सीआरपीसी के तहत एक आवेदन दायर किया। 10.07.2024 को, अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट-द्वितीय, गौतम बुद्ध नगर की अदालत ने शिकायतकर्ता-प्रतिवादी संख्या 2 के धारा 156(3) सीआरपीसी के तहत आवेदन को स्वीकार कर लिया और याचिकाकर्ता और अन्य के खिलाफ एफ.आई.आर. दर्ज करने का निर्देश दिया। 3.08.2024 को, एक एफ.आई.आर. भारतीय दंड संहिता की धारा 420, 406, 467, 468, 471, 120-बी, 504 और 507 के तहत अपराध के लिए मामला संख्या 311/2024, पुलिस स्टेशन बीटा 2, जिला बृहत्तर नोएडा (गौतम बुद्ध नगर कमिशनरेट) में याचिकाकर्ता और चार अन्य के खिलाफ दर्ज की गई है। इस एफ.आई.आर. के विरुद्ध याचिकाकर्ता ने गौतम बुद्ध नगर के माननीय अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश की अदालत में अग्रिम जमानत याचिका दायर की है। याचिकाकर्ता की अग्रिम जमानत संबंधित न्यायालय द्वारा दिनांक 28.08.2024 के आदेश द्वारा खारिज कर दी गई थी। इसके बाद, याचिकाकर्ता ने इलाहाबाद उच्च न्यायालय में अग्रिम जमानत आवेदन संख्या 9551/2024 प्रस्तुत किया, जिसमें न्यायालय ने दिनांक 26.09.2024 के आदेश द्वारा विवाद के निपटारे के लिए मामले को मध्यस्थता एवं समझौता केंद्र को भेज दिया। हालांकि, दिनांक 07.07.2025 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ता की अग्रिम जमानत

आरोपपत्र प्रस्तुत किए जाने तक मंजूर कर ली गई थी। यह रिट याचिका दिनांक 03.08.2024 को पुलिस स्टेशन बीटा 2, जिला गौतम बुद्ध नगर, उत्तर प्रदेश में दर्ज एफ.आई.आर. को रद्द करने की मांग करते हुए दायर की गई है। जांच पूरी होने के बाद, याचिकाकर्ता के विरुद्ध दिनांक 17.07.2025 को अभियोग पत्र सक्षम न्यायालय में दाखिल किया गया और सक्षम न्यायालय ने दिनांक 26.08.2025 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ता के विरुद्ध संज्ञान लिया। इसके बाद, आवेदक ने रिट याचिका में संशोधन हेतु आवेदन दाखिल किया। इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने दिनांक 04.09.2025 के आदेश द्वारा इसे स्वीकार कर लिया।

याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता की दलीलें

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

5. श्री गोपाल स्वरूप चतुर्वेदी, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, जिनकी सहायता सुश्री सौम्या चतुर्वेदी, विद्वान अधिवक्ता कर रही थीं; श्री दिनेश कुमार गोस्वामी, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, जिनकी सहायता श्री देवांग साल्वा, श्री अनुज शुक्ला और श्री यश गिरी कर रहे थे, याचिकाकर्ता की ओर से पेश हुए। याचिकाकर्ता के अनुसार, उनकी एकमात्र शिकायत उपरोक्त परियोजना से याचिकाकर्ता द्वारा अर्जित कथित लाभ के बंटवारे से संबंधित थी, जो स्पष्ट रूप से इसे एक दीवानी विवाद बनाता है, जिसमें अनुबंध करने वाले पक्षों के अधिकारों और दायित्वों का निर्णय किया जाना चाहिए था। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि शिकायतकर्ता की अन्य शिकायतें यह थीं कि याचिकाकर्ता को सुनीत कोहली के साथ कोई साझेदारी विलेख नहीं करना चाहिए था, जबकि उसकी शिकायतकर्ता की पत्नी के साथ एक अनन्य साझेदारी थी। विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता आगे प्रस्तुत करते हैं कि ऐसा कोई स्पष्ट कानून नहीं है जो किसी एक पक्ष को एकाधिक साझेदारी समझौतों में प्रवेश करने से रोकता हो। यदि इन सभी आरोपों को सत्य मान लिया जाए, तो केवल अनुबंध का उल्लंघन होगा, जिसका निर्णय या तो मध्यस्थता द्वारा या दीवानी मुकदमे के माध्यम से किया जाएगा।

6. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री जी.एस. चतुर्वेदी ने पुरजोर तर्क दिया कि शिकायतकर्ता को दीवानी विवादों/देनदारियों के निपटारे के लिए आपराधिक न्याय प्रणाली का सहारा लेने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए, इसलिए दिनांक 03.08.2024 की आक्षेपित प्रथम सूचना रिपोर्ट कानून की प्रक्रिया का घोर दुरुपयोग है। याचिकाकर्ता के खिलाफ दुर्भावनापूर्ण अभियोजन पक्ष द्वारा पक्षों के बीच दीवानी प्रकृति के गंभीर विवादों के बावजूद व्यक्तिगत दुश्मनी निकालने के लिए मुकदमा चलाया गया है। न्यायालय को यह भी सूचित किया जाता है कि याचिकाकर्ता और शिकायतकर्ता की पत्नी के बीच साझेदारी विलेख में स्पष्ट मध्यस्थता खंड है जिसका उपयोग लाभ के बंटवारे से संबंधित किसी भी विवाद की स्थिति में किया जाना चाहिए।

7. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने अपने तर्कों के समर्थन में **शरीफ अहमद और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य (2024) 14 एससीसी 122** के फैसले का हवाला दिया है और प्रस्तुत किया है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह धारित किया है कि “दीवानी विवादों और दावों को निपटाने का प्रयास, जिनमें कोई आपराधिक अपराध शामिल नहीं है, आपराधिक अभियोजन के माध्यम से दबाव डालकर, निंदनीय और हतोत्साहित किया जाना चाहिए”। उन्होंने **वेसा होल्डिंग्स (पी) लिमिटेड बनाम केरल राज्य (2015) 8 एससीसी 293** के फैसले पर भी भरोसा जताया है और विशेष रूप से उक्त फैसले के अनुच्छेद 12 और 13 पर जोर दिया है जो इस प्रकार हैं:-

“12.कानून का स्थापित सिद्धांत यह है कि अनुबंध का प्रत्येक उल्लंघन धोखाधड़ी का अपराध नहीं बनता है और केवल उन्हीं मामलों में अनुबंध का उल्लंघन धोखाधड़ी माना जाएगा जहां शुरुआत में ही कोई छल किया गया हो। यदि धोखाधड़ी का इरादा बाद में विकसित हुआ है, तो वह धोखाधड़ी नहीं हो सकता। दूसरे शब्दों में, धोखाधड़ी का अपराध गठित करने के लिए, शिकायतकर्ता को यह दिखाना होगा कि आरोपी का वादा या प्रतिनिधित्व करते

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



समय कपटपूर्ण या बेईमानी का इरादा था। यहां तक कि ऐसे मामले में भी जहां आरोपी द्वारा अपना वादा निभाने में विफलता के आरोप लगाए गए हैं, प्रारंभिक वादा करते समय दोषी इरादे की अनुपस्थिति में, भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के तहत कोई अपराध नहीं बनता है।

13. यह सच है कि तथ्यों का एक दिया गया समूह दीवानी अपराध के साथ-साथ आपराधिक अपराध भी बना सकता है और केवल इसलिए कि शिकायतकर्ता को दीवानी उपचार उपलब्ध है, यह स्वयं आधार नहीं हो सकता है। किसी आपराधिक कार्यवाही को रद्द करना। असली कसौटी यह है कि क्या शिकायत में लगाए गए आरोप धोखाधड़ी के आपराधिक अपराध को प्रकट करते हैं या नहीं। वर्तमान मामले में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह पता चले कि शुरुआत में ही आरोपी व्यक्तियों का धोखाधड़ी करने का कोई इरादा था, जो कि आईपीसी की धारा 420 के तहत अपराध के लिए एक पूर्व शर्त है। हमारी राय में, शिकायत में किसी भी आपराधिक अपराध का खुलासा नहीं होता है। आपराधिक कार्यवाही को तब प्रोत्साहित नहीं किया जाना चाहिए जब वह दुर्भावनापूर्ण पाई जाए या अन्यथा न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग हो।

8. अंत में यह निवेदन किया जाता है कि याचिकाकर्ता और शिकायतकर्ता की पत्नी के बीच का विवाद विशुद्ध रूप से एक वैध साझेदारी द्वारा संचालित व्यावसायिक लेन-देन से उत्पन्न हुआ है, जो दीवानी कानून के अंतर्गत आता है और किसी भी आपराधिक अपराध को आकर्षित नहीं करता है। यह भी निवेदन किया जाता है कि एफआईआर को पढ़ने से धारा 420, 406, 467, 468, 471, 120-बी, 504, 507 आईपीसी के तहत किसी भी अपराध का खुलासा नहीं होता है, इसलिए तत्काल एफआईआर और उससे उत्पन्न कार्यवाही रद्द किए जाने योग्य हैं।

प्रतिवादियों के विद्वान वकील की दलीलें

9. श्री वी.पी. श्री श्रीवास्तव, वरिष्ठ अधिवक्ता, जिनकी सहायता श्री मोहित सिंह और श्री राजन मिश्रा, प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ताओं ने की, ने रिट याचिका का पुरजोर विरोध किया और निवेदन किया कि यह न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत निर्धारित रोस्टर में बैठा है, इसलिए, इस न्यायालय को संबंधित न्यायालय के दिनांक 26.08.2025 के संज्ञान आदेश पर निर्णय देने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है। आगे यह निवेदन किया जाता है कि संबंधित मजिस्ट्रेट द्वारा पारित संज्ञान आदेश को भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 (जिसे आगे 'बीएनएसएस' कहा गया है) की धारा 528 के तहत उपयुक्त क्षेत्राधिकार के समक्ष चुनौती दी जा सकती है। यह दृढ़तापूर्वक निवेदन किया जाता है कि न्यायिक समीक्षा की शक्ति भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत आपराधिक मामलों में तब तक लागू नहीं होती जब तक कि संबंधित न्यायालय द्वारा संज्ञान नहीं ले लिया जाता। यह भी निवेदन किया जाता है कि आरोपपत्र दाखिल करना और उसके बाद संज्ञान लेना मामले की कानूनी स्थिति में परिवर्तन का संकेत देता है, जो रिट क्षेत्राधिकार को सीमित करता है।



10. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रदत्ता प्रॉजल कुलकर्णी बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य, 2025 एससीसी ऑनलाइन एससी 1948 के फैसले पर भरोसा जताया है, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने संवैधानिक रिट शक्तियों और वैधानिक उपचारों के बीच परस्पर संबंध को स्पष्ट किया है। यह उन स्थितियों के बीच स्पष्ट अंतर करता है जहां जांच अभी भी जारी है, जिसमें रिट याचिका के माध्यम से हस्तक्षेप की अनुमति है, और उन मामलों में जहां आरोप पत्र पर संज्ञान लिया जा चुका है, जिन्हें इसके बजाय बीएनएसएस की धारा 528 के तहत निपटाया जाना चाहिए।

11. आगे यह निवेदन किया जाता है कि इलाहाबाद उच्च न्यायालय नियम, 1952 के अध्याय V नियम 2 में निहित प्रावधानों के अनुसार, धारा 528 बीएनएसएस (482 सीआरपीसी) के तहत आवेदन एकल न्यायाधीश की पीठ के समक्ष रखे जाने हैं, जबकि एफआईआर को रद्द करने के लिए दायर आपराधिक रिट याचिकाएं खंडपीठ के समक्ष रखी जानी हैं। अतः, उपरोक्त उच्च न्यायालय नियमों को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय के पास याचिकाकर्ता द्वारा इस रिट याचिका में चुनौती दिए गए संज्ञान आदेश को रद्द करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है। उन्होंने इलाहाबाद उच्च न्यायालय नियमों के अध्याय XXII नियम 1 में निहित प्रावधानों पर भी भरोसा किया है। यह रिट याचिका योग्यताहीन है और खारिज किए जाने योग्य है।

विश्लेषण एवं निष्कर्ष

12. संबंधित पक्षों की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ताओं की बात सुनी गई, और रिट याचिका में उल्लिखित सामग्री तथा अन्य प्रस्तावों का अवलोकन किया गया।

13. इस मामले में यह एक स्वीकृत तथ्य है कि जांच पूरी होने के बाद, 17.07.2025 को संबंधित न्यायालय के समक्ष आरोपपत्र दाखिल किया गया था और आरोपपत्र सहित उपलब्ध सामग्री पर विचार करने के बाद, संबंधित न्यायालय ने प्रथम दृष्टया संज्ञान लेने का मामला पाया और तदनुसार 26.08.2025 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ता के विरुद्ध संज्ञान लिया।

14. मूल रूप से, यह रिट याचिका एफ.आई.आर. को रद्द करने के लिए दायर की गई थी। लेकिन बाद में उक्त रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान, जांच पूरी हो गई, आरोपपत्र दाखिल कर दिया गया और इस पर संज्ञान भी ले लिया गया, इसलिए याचिकाकर्ता ने रिट याचिका में संशोधन के लिए एक आवेदन दिया और इसे इस न्यायालय की समन्वय पीठ के 04.09.2025 के आदेश द्वारा स्वीकार कर लिया गया। तदनुसार, इस रिट याचिका में संशोधन किया गया। संशोधित रिट याचिका में, दिनांक 17.07.2025 की आक्षेपित आरोपपत्र और दिनांक 26.08.2025 के संज्ञान आदेश को भी चुनौती दी गई है। याचिकाकर्ता और प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा उठाए गए तर्कों पर विचार करने के बाद, निर्णय लेने योग्य मुख्य



प्रश्न यह है कि “क्या यह न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत अपने अधिकार क्षेत्र में संबंधित मजिस्ट्रेट के समन या संज्ञान आदेश को रद्द कर सकता है?”

15. बॉम्बे उच्च न्यायालय ने **यूसुफ और 8 अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य और 2 अन्य (आपराधिक आवेदन संख्या 3134 / 2019)** के मामले में निम्नलिखित निर्णय दिया:-

“कई निर्णयों में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 या धारा 482 सीआरपीसी के तहत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते समय पालन किए जाने वाले विस्तृत दिशानिर्देश निर्धारित किए हैं। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **राधे श्याम और अन्य बनाम छबी नाथ और अन्य (2015) 5 एससीसी 423** में यह धारित किया है कि न्यायिक आदेश संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत सामान्य रूप से रिट क्षेत्राधिकार के अधीन नहीं हैं और यह स्पष्ट किया है कि संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत पर्यवेक्षी क्षेत्राधिकार के साथ-साथ धारा 482 सीआरपीसी के तहत अंतर्निहित क्षेत्राधिकार ऐसे मामलों में उपयुक्त मंच है। यहां तक कि **मेसर्स पेप्सी फूड्स लिमिटेड और अन्य बनाम विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट और अन्य (1998) 5 एससीसी 749** के मामले में भी माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दोहराया है कि उच्च न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 या धारा 482 सीआर.पी.सी. के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग कर आपराधिक कार्यवाही को रद्द कर सकते हैं जहां प्रक्रिया का दुरुपयोग स्पष्ट हो। **हरियाणा राज्य और अन्य बनाम भजन लाल और अन्य 1992 अनुपूरक (1) एससीसी 335** के मामले में, कानून की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और धारा 482 सीआरपीसी के तहत आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने हेतु उदाहरण स्वरूप श्रेणियां निर्धारित की गईं। इन दिशा-निर्देशों को जारी रखते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने **नीता सिंह और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य 2024 एससीसी ऑनलाइन एससी 5761** के मामले में एक बार फिर यह धारित किया कि एक बार सक्षम न्यायालय द्वारा संज्ञान लेने के बाद, किसी एफआईआर को रद्द करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत दायर याचिका मान्य नहीं रह सकती। हालाँकि, **प्रदन्या प्रांजल कुलकर्णी बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य 2025 एससीसी ऑनलाइन एससी 1948** के नवीनतम फैसले में, सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट किया है कि जहाँ याचिका दोहरी अधिकारिता का आह्वान करती है, एक संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत और दूसरी धारा 482 सीआर.पी.सी. के तहत, जो अब धारा 528 बी.एन.एस.एस. के अनुरूप है, उच्च न्यायालय संज्ञान लेने के बाद न केवल एफआईआर/आरोपपत्र को रद्द करने का अपना अधिकार क्षेत्र बरकरार रखता है बशर्ते कि याचिका में दलीलें उचित रूप से शामिल की गई हों, और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि यदि रोस्टर इसकी अनुमति देता है।”

16. संदर्भ के लिए, इलाहाबाद उच्च न्यायालय नियम, 1952 के अध्याय V नियम 2 में निम्नलिखित लिखा है:

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



“2. एकल न्यायाधीश का क्षेत्राधिकार:- इन नियमों या अन्य कानून द्वारा दिए गए प्रावधानों को छोड़कर, निम्नलिखित मामलों की सुनवाई और निपटारा एकल न्यायाधीश द्वारा किया जाएगा, नामतः --

(i) अपील जापन या प्रति-आपति या आवेदन को स्वीकार करने या आवेदन पर एकतरफा अंतरिम आदेश के लिए आवेदन;

1[(ii) (ए) किसी डिक्री से सिविल 2 [***] द्वितीय अपील, जिसमें राजस्व न्यायालय में दायर मामले से उत्पन्न अपील भी शामिल है, जिसमें क्षेत्राधिकार के प्रयोजन के लिए अपील का मूल्य 3 [एक लाख] रुपये से अधिक नहीं है;

4 [(ए ए) उत्तर प्रदेश सिविल विधि संशोधन अधिनियम, 1991 (उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 17) के प्रारंभ होने से पहले या बाद में दायर की गई सिविल प्रथम अपील 1991)] एक डिक्री से जिसमें राजस्व न्यायालय में दायर एक मामले से उत्पन्न अपील शामिल है, जिसमें क्षेत्राधिकार के प्रयोजन के लिए अपील का मूल्य [पांच लाख] रुपये से अधिक नहीं है;

(बी) हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 28 के तहत अपील;

(सी) कोई अन्य दीवानी अपील जिसमें अपील का मूल्य दो लाख रुपये से अधिक न हो;

7[बशर्ते कि जहां मूल्य-आधारित न्यायालय शुल्क का भुगतान किया गया हो, वहां मूल्य उस राशि के बराबर माना जाएगा जिस पर ऐसा न्यायालय शुल्क भुगतान किया गया है;]

(iii) दीवानी पुनरीक्षण;

(iv) किसी अपील या आवेदन को वापस लेने के लिए आवेदन, या सहमति डिक्री या आदेश के लिए आवेदन, जो निर्विवाद हो या जो ऐसे मामले में किया गया हो जिसकी सुनवाई इन नियमों के तहत अकेले बैठे न्यायाधीश द्वारा की जा सकती हो;

(v) कोई अन्य आवेदन जो निम्नलिखित नहीं है--

(ए) परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 5 के तहत आवेदन ऐसे मामले में जिसकी सुनवाई अकेले बैठे न्यायाधीश द्वारा नहीं की जा सकती;

(बी) 9 [***]

(सी) एक आवेदन 53[अंतरिम आदेश के लिए आवेदन के अलावा] जिस पर अध्याय XXII, भाग IV लागू होता है;

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु हैं और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(डी) एक आवेदन 10[अंतरिम आदेश के लिए आवेदन के अलावा] जिसकी सुनवाई इन नियमों या अन्य कानून द्वारा दो या दो से अधिक न्यायाधीशों की पीठ द्वारा की जानी आवश्यक है;

(ई) एक आवेदन 53[अंतरिम आदेश के लिए आवेदन के अलावा] अध्याय IX, नियम 10 के अंतर्गत; या

(एफ) 11[***]

(vi) न्यायालय के समक्ष उसके सामान्य या असाधारण मूल दीवानी वसीयती या वैवाहिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग में आने वाला मुकदमा या मुकदमे की प्रकृति की कार्यवाही, जिसमें भारतीय ट्रस्ट अधिनियम, 1882 55[कंपनी अधिनियम, 1956] या भारतीय पेटेंट और डिजाइन अधिनियम, 1911 के अंतर्गत कार्यवाही शामिल है;

(vii) आपराधिक अपील, आवेदन या संदर्भ, सिवाय-

(ए) ऐसे मामले में अपील या संदर्भ जिसमें मृत्युदंड या आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई हो 12[प्रवेश के चरण से जमानत पर विचार सहित आगे];

13(बी) "दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 378 के तहत बरी करने के आदेश से अपील 14[ऐसे अपराध के संबंध में जिसके लिए अधिकतम सजा या तो आजीवन कारावास या मृत्युदंड है"]।

(सी) 15(***)

(डी) ऐसा मामला जिसमें किसी आरोपी व्यक्ति को 58[दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 401] के तहत नोटिस जारी किया गया हो उपस्थित होने और कारण बताने के लिए कि उसकी सजा क्यों नहीं बढ़ाई जानी चाहिए;

(ई) [***]

(एफ) ऐसा आवेदन जिस पर अध्याय XXI, भाग IV लागू होता है;

(viii) न्यायालय के समक्ष उसके सामान्य या असाधारण मूल आपराधिक क्षेत्राधिकार के प्रयोग में आने वाला मामला;

(ix) पारित आदेश के विरुद्ध अपील या पुनरीक्षण 16[दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 340, 341 या 343 के तहत]

बशर्ते कि:-

(ए) मुख्य न्यायाधीश यह निर्देश दे सकते हैं कि कोई मामला या मामलों का वर्ग जो एकल न्यायाधीश द्वारा सुना जा सकता है, उसे दो या दो से अधिक न्यायाधीशों की पीठ द्वारा

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



सुना जाए [या कोई मामला या मामलों का वर्ग जो दो या दो से अधिक न्यायाधीशों की पीठ द्वारा सुना जा सकता है, उसे एकल न्यायाधीश द्वारा सुना जाए];

(बी) यदि न्यायाधीश उचित समझे, तो वह किसी ऐसे मामले को जो एकल न्यायाधीश द्वारा सुना जा सकता है या उसमें उत्पन्न होने वाले किसी विधि के प्रश्न को बड़े पीठ को निर्णय के लिए भेज सकता है; और

(सी) कोई भी न्यायाधीश, जिसके समक्ष भारतीय न्यास अधिनियम, 1882, [कंपनी अधिनियम, 1956] या पेटेंट और डिज़ाइन अधिनियम, 1911 के अधीन कोई कार्यवाही लंबित है, मुख्य न्यायाधीश की अनुमति से, ऐसी कार्यवाही या उसमें उठने वाले किसी प्रश्न या प्रश्नों की सुनवाई और निर्णय के लिए, एक या अधिक अन्य न्यायाधीशों की सहायता प्राप्त कर सकता है।“

17. इलाहाबाद उच्च न्यायालय नियमावली, 1952 का अध्याय XXII, नियम 1 निम्नानुसार है:

संविधान के अनुच्छेद 226 (और अनुच्छेद 227) के तहत निर्देश, आदेश या रिट, बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट को छोड़कर

“1. आवेदन - (1) संविधान के अनुच्छेद 226 [और अनुच्छेद 227] के तहत निर्देश, आदेश या रिट के लिए आवेदन, बंदी प्रत्यक्षीकरण रिट को छोड़कर, आवेदन प्राप्त करने के लिए नियुक्त डिवीजन बेंच को या, जिस दिन ऐसी कोई बेंच उपस्थित न हो, उस दिन दीवानी मामलों में आवेदन प्राप्त करने के लिए नियुक्त न्यायाधीश को किया जाएगा। बाद की स्थिति में न्यायाधीश निर्देश देगा कि आवेदन आदेशों के लिए डिवीजन बेंच के समक्ष रखा जाए.....”

18. उपरोक्त नियमों के अनुसार, धारा 528 बीएनएसएस (482 सीआरपीसी) के तहत आवेदन, जिसके द्वारा न्यायालय को संज्ञान आदेश या किसी न्यायिक आदेश को रद्द करने की अंतर्निहित शक्ति प्राप्त है संबंधित न्यायालय द्वारा पारित आदेश एकल न्यायाधीश पीठ के समक्ष रखे जाने हैं, परन्तु आपराधिक रिट याचिकाएँ एफ.आई.आर. को रद्द करने हेतु द्विभाजित पीठ के समक्ष रखी जानी हैं। द्विभाजित पीठ सामान्यतः भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत रिट क्षेत्राधिकार के अधीन होती हैं।

19. नीता सिंह और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य, 2024 एससीसी ऑनलाइन एससी 5761 के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने पैराग्राफ संख्या में... 3, 4, 13, 14 और 15 में निम्नलिखित निर्णय दिए गए हैं:-

“3. हमें उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र की सीमाओं के बारे में कोई संदेह नहीं है, जब यह चुनौती प्रस्तुत की जाती है कि आक्षेपित एफआईआर को निर्धारित मापदंडों के आधार पर रद्द किया जाना चाहिए। हालांकि, इस स्थापित कानूनी स्थिति को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है कि यह पूरी तरह से उच्च न्यायालय के विवेक पर निर्भर है कि वह अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

हस्तक्षेप करे या नहीं, जब अन्य उपाय उपलब्ध हों। यदि संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत किसी उच्च न्यायालय के समक्ष दायर रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान, जहां एफआईआर को चुनौती दी गई है, जांच पूरी हो जाती है और आरोपपत्र दाखिल कर दिया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप सक्षम आपराधिक न्यायालय अपराध का संज्ञान लेता है, तो न्यायालय न्यायिक आदेश के हस्तक्षेप के कारण रिट याचिका पर आगे बढ़ने में असमर्थ होगा। हम इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा राधेय श्याम बनाम छबी नाथ 17 के संदर्भ में दिए गए निर्णय का लाभप्रद रूप से उल्लेख कर सकते हैं। सूर्य देव राय बनाम राम चंद्र राय 18 में व्यक्त किए गए दृष्टिकोण को अस्वीकार करते हुए, यह धारित किया गया कि सिविल न्यायालय के न्यायिक आदेश संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट क्षेत्राधिकार के अधीन नहीं हैं और अनुच्छेद 227 के तहत क्षेत्राधिकार अनुच्छेद 226 के तहत क्षेत्राधिकार से भिन्न है। हम इस निर्णय से यह भी देख सकते हैं कि उच्च प्राधिकारियों के निर्णयों पर विचार करने के बाद, एक कानूनी सिद्धांत स्थापित किया गया था कि न्यायिक आदेशों को अपील या पुनरीक्षण के माध्यम से या संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत चुनौती दी जा सकती है, न कि अनुच्छेद 226 और 32 के तहत रिट के माध्यम से।

4. न्यायिक आदेशों को संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट याचिका में चुनौती न दिए जाने का अंतर्निहित कारण यह प्रतीत होता है कि ऐसे आदेशों को किसी मौलिक अधिकार, संविधान द्वारा प्रदत्त किसी अधिकार या वैधानिक रूप से प्रदत्त अधिकार के उल्लंघन या अतिक्रमण में न्यायालय के पीठासीन अधिकारी द्वारा पारित किए जाने का वैध दावा नहीं किया जा सकता है। जिसे उच्च न्यायालयों के विशेषाधिकार रिट क्षेत्राधिकार के प्रयोग में उत्प्रेषण रिट जारी करके सुधारा जा सकता है। अंततः, यदि किसी न्यायिक आदेश के परिणामस्वरूप किसी व्यक्ति के किसी अधिकार का उल्लंघन होता है, तो कानून उन मंचों का प्रावधान करते हैं जहाँ ऐसे आदेश को चुनौती दी जा सकती है। और ऐसे ही मंचों पर अपनी शिकायत के निवारण के लिए संपर्क किया जाना चाहिए। यह स्थिति इस न्यायालय के संविधान पीठ के नरेश श्रीधर मिराजकर बनाम महाराष्ट्र राज्य²⁰ और रूपा अशोक हुर्रा बनाम अशोक हुर्रा²¹ के निर्णयों के साथ-साथ साधना लोध बनाम नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड²² के तीन न्यायाधीशों की पीठ के निर्णय से स्पष्ट होती है।

13. पेप्सी फूड्स (उपरोक्त) मामले में, संबंधित उच्च न्यायालय में अनुच्छेद 226 और 227 के तहत एक याचिका दायर की गई थी। उच्च न्यायालय ने इस आधार पर हस्तक्षेप से इनकार कर दिया कि याचिकाकर्ता अनुच्छेद 226 के तहत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग नहीं कर सकते थे। हालांकि, इस न्यायालय का मत था कि अनुच्छेद 226 और 227 के तहत उच्च न्यायालय में दायर याचिका को संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत ही माना जा सकता है और उस पर निर्णय लिया जा सकता है। नामकरण के महत्वहीन होने की टिप्पणी इस तर्क पर की गई थी कि यदि उच्च न्यायालय के पास निर्णय लेने का अधिकार क्षेत्र है, तो नामकरण



न्यायालय को अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने से नहीं रोकेगा, जब तक कि कोई विशेष प्रक्रिया निर्धारित न हो, जो अनिवार्य हो।

(जोर दिया गया)

14. उपरोक्त कथन को ध्यान में रखते हुए, इस स्तर पर कलकत्ता उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ द्वारा सोहन लाल बैद बनाम पश्चिम बंगाल राज्य²³ के मामले में दिए गए निर्णय का उल्लेख करना उपयोगी होगा। माननीय पी.डी. देसाई, मुख्य न्यायाधीश के माध्यम से निर्णय देते हुए, खंडपीठ ने यह धारित किया कि मुख्य न्यायाधीश द्वारा किसी न्यायाधीश को मामला आवंटित किए बिना किसी विद्वान न्यायाधीश द्वारा मामले का निर्णय करना अमान्य होगा। उपरोक्त दृष्टिकोण को इस न्यायालय ने राज्य राजस्थान बनाम प्रकाश चंद²⁴ के मामले में अनुमोदित किया था। कई पूर्व निर्णयों के सर्वेक्षण के बाद, इस न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दिया:

“59. पिछली चर्चा से निम्नलिखित व्यापक निष्कर्ष निकलते हैं। इसे हमारे निर्णय का सारांश नहीं माना जाना चाहिए और निष्कर्षों को निर्णय के पाठ के साथ पढ़ा जाना चाहिए:

(1) उच्च न्यायालय का प्रशासनिक नियंत्रण केवल मुख्य न्यायाधीश में निहित है। न्यायिक पक्ष में, वे केवल समतावादियों में प्रथम हैं।

(2) मुख्य न्यायाधीश रोस्टर के स्वामी हैं। केवल उन्हें ही न्यायालय की पीठों का गठन करने और गठित पीठों को मामले आवंटित करने का विशेषाधिकार है।

(3) कनिष्ठ न्यायाधीश केवल वही कार्य कर सकते हैं जो उन्हें मुख्य न्यायाधीश द्वारा या उनके निर्देशों के तहत सौंपा गया हो।

(4) मुख्य न्यायाधीश द्वारा किए गए किसी भी निर्णय के लागू रहने तक, कोई भी न्यायाधीश जो अकेले बैठने वाला है, खंडपीठ में नहीं बैठ सकता है और खंडपीठ का गठन करने वाले न्यायाधीशों द्वारा खंडपीठ को विभाजित नहीं किया जा सकता है। पीठ स्वयं और ऐसी पीठ के एक या दोनों न्यायाधीश अकेले बैठते हैं और किसी अन्य प्रकार के न्यायिक कार्य को संभालते हैं जो अन्यथा मुख्य न्यायाधीश द्वारा या उनके निर्देशों के तहत उन्हें सौंपा नहीं गया है।

(5) ***

(6) कनिष्ठ न्यायाधीश उच्च न्यायालय में लंबित किसी भी मामले को चुन-चुनकर अपने हाथ में नहीं ले सकते और मुख्य न्यायाधीश के उचित आदेश के बिना उसे निपटान के लिए स्वयं को नहीं सौंप सकते।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(7) कोई भी न्यायाधीश रजिस्ट्री को किसी भी मामले को अपने समक्ष सूचीबद्ध करने के लिए निर्देश नहीं दे सकता जो मुख्य न्यायाधीश द्वारा दिए गए निर्देशों के विपरीत हो।

***''

15. प्रकाश चंद (उपरोक्त) के निर्णय को ध्यान में रखते हुए, हम मानते हैं कि याचिका का नामकरण और उसका सार महत्वपूर्ण है। बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि याचिका का विषय क्या है और किसे इसकी सुनवाई और निर्णय करने का दायित्व सौंपा गया है। उच्च न्यायालय का कोई न्यायाधीश जिसे मुख्य न्यायाधीश द्वारा अनुच्छेद 226 के अंतर्गत याचिकाओं की सुनवाई और निर्णय के लिए सौंपा गया है, यदि वह (न्यायाधीश) पाता है कि अनुच्छेद 226 के अंतर्गत दायर याचिका आदर्श रूप से अनुच्छेद 227 के अंतर्गत दायर की जानी चाहिए थी, तो वह याचिका को अनुच्छेद 227 के अंतर्गत याचिका मानकर उसकी सुनवाई और निर्णय नहीं कर सकता, जब तक कि मुख्य न्यायाधीश ने ऐसे न्यायाधीश को संविधान के अनुच्छेद 227 के अंतर्गत याचिकाओं की सुनवाई और निर्णय के लिए भी न सौंपा हो। यदि ऐसा नहीं सौंपा गया है, तो विद्वान न्यायाधीश, अपने विवेक से, याचिका को अनुच्छेद 227 के अंतर्गत याचिका मानकर उस विद्वान न्यायाधीश के समक्ष रखने का निर्देश दे सकता है जिसे यह कार्य सौंपा गया है। यह अनिवार्य है, और इसलिए पेप्सी फूड्स (उपरोक्त) के अनुच्छेद 26 के शुरुआती वाक्य में इस न्यायालय द्वारा दी गई चेतावनी अत्यंत महत्वपूर्ण है।''

20. प्रदन्या प्रांजल कुलकर्णी (उपरोक्त) मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट किया है कि जहां याचिका में दोहरी अधिकारिता का प्रयोग किया गया है, एक संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत और दूसरी धारा 528 बीएनएसएस (482 सीआरपीसी) के तहत, वहां उच्च न्यायालय संज्ञान लेने के बाद भी अपना अधिकार क्षेत्र बरकरार रखता है, न केवल एफआईआर/आरोपपत्र बल्कि संज्ञान लेने वाले आदेश को भी रद्द करने के लिए, बशर्ते याचिका में दलीलें उचित रूप से शामिल की गई हों, और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि यदि रोस्टर इसकी अनुमति देता हो।

21. उपरोक्त अनुच्छेदों में हुई चर्चा के अनुसार, यह भी निर्धारित है कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को जब उसके मुख्य न्यायाधीश द्वारा अनुच्छेद 226 के तहत याचिकाएं सुनवाई और निर्णय के लिए सौंपी जाती हैं, यदि वह पाता है कि संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत दायर याचिका आदर्श रूप से अनुच्छेद 227/528 बीएनएसएस के तहत दायर की जानी चाहिए थी, तो वह उस याचिका को अनुच्छेद 227/528 बीएनएसएस के तहत याचिका मानकर सुनवाई और निर्णय की कार्यवाही करेगा। जब तक मुख्य न्यायाधीश ने न्यायाधीश को अनुच्छेद 227/528 बीएनएसएस के तहत याचिकाओं की सुनवाई और निर्णय करने के लिए नियुक्त न किया हो, तब तक ऐसा नहीं किया जा सकता। यदि ऐसा नहीं किया गया है, तो विद्वान न्यायाधीश अपने विवेक से याचिका को अनुच्छेद 227/528 बीएनएसएस के तहत याचिका मानकर संबंधित न्यायाधीश के समक्ष रखने का निर्देश दे सकते हैं।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



22. इस न्यायालय को केवल भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत ही क्षेत्राधिकार प्राप्त है। कार्यसूची उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश द्वारा तैयार की जाती है और किसी भी न्यायालय द्वारा इसका उल्लंघन नहीं किया जा सकता है। कार्यसूची संवैधानिक परंपरा और इस न्यायालय/सर्वोच्च न्यायालय के नियमों पर आधारित है।

23. यह सर्वविदित तथ्य है कि इस न्यायालय को दोहरी क्षेत्राधिकार प्राप्त नहीं है, एक संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत और दूसरा अनुच्छेद 227/528 बीएनएसएस के अंतर्गत, इसलिए, इस न्यायालय को केवल भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत ही क्षेत्राधिकार प्राप्त है, जैसा कि मुख्य न्यायाधीश द्वारा निर्धारित किया गया है।

24. उपरोक्त विधि सिद्धांत, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के स्पष्टीकरण और अभिलेख में उपलब्ध तथ्यों और सामग्रियों को ध्यान में रखते हुए, हमारा मत है कि यह रिट याचिका विचारणीय नहीं है।

25. तदनुसार, यह रिट याचिका विचारणीय न होने के कारण खारिज की जाती है।

26. याचिकाकर्ता संज्ञान आदेश को रद्द करने के लिए उपयुक्त न्यायालयों में उचित आवेदन या याचिका दायर करने के लिए स्वतंत्र है।

(न्यायमूर्ति लक्ष्मी कांत शुक्ल) (न्यायमूर्ति चन्द्र धारी सिंह)

जनवरी 13, 2026

सौरभ